卐 महासती 卐

भाग

6

२) रुपये

• લેખક •

पं० वीरसेनविजयजी गणिवर्य

-: પ્રકાશક :-

लब्धिकृपा प्रकाशन समिति

कोल्हापुर

अंजनासुन्दरी

अतिशय आपत्ति को आदमी अंजना सुन्दरी की तरह शुद्ध शीयल के प्रभाव से एक क्षण में विनष्ट कर देता है ।

चलो उस अंजना सुन्दरी को कथा पढ़ें ।

आदित्य नामक नगर था । उसी नगर में प्रहलाद राजा राज्य करते थे उनकी केतुमती रानो थी उनका एक पुत्र था पवनंजय जो अनेक विद्याओं की साधना करता था ।

उधर महेन्द्रपुर नामक नगर में महेन्द्र नामक नृपति राज्य करता था उनकी हृदय सुन्दरी नामक पत्नि थी उनको अंजना सुन्दरी नामक एक सुपुत्री थी जो क्रम से वृद्धि पाती यौवन के उपवन में आकर खड़ी थी तभी अंजना सुन्दरी का विवाह पवनंजय राजकुमार के साथ हुआ लेकिन गर्व (संशय) के कारण से महासती की मन से सार-संभाल नहीं रखता था तो फिर काया और वचन से तो कैसा सुख देता होगा ? अंजना सुन्दरी तो दुःख में काल निर्गमन करने लगी ।

एक दिन रावण का दूत आकर प्रह्लाद राजा को कहने लगा—वरुण के साथ युद्ध करने जाना है इसलिए आपको हमारा स्वामी बनना है। पवनंजय ने पिता से कहा इसी समय मैं जाऊँगा। पवनंजय ने माता-पिता को वंदन कर प्रस्थान किया, उसी समय अंजना अपने पति के पाँव में नमस्कार और विदाई देने आई तभी भी पवनंजय ने उसकी अवज्ञा कर दी। तत्पश्चात् वह सैन्य के साथ गगनमंडल में उड़कर सरोवर के किनारे पहुंचा वहाँ एक चक्रवाकी रात्रि में चक्रवाक के विरह में तड़प रही थी, तरस रही थी। वही देखकर पवनंजय को अपनी पत्नि याद आ गई मेरी पत्नि की मेरे विरह में कैसी दशा होगी ? ऐसा सोच रहा था मित्र ने उपहास भी किया रात्रि में अपनी पत्नि के पास पहुंचकर काम-भोग कर दिया। प्रात: हुआ वापस आने लगा तभी अंजना ने कहा आप तो चले जाओगे लेकिन मेरा गर्भ वृद्धि होगा तो मैं क्या जवाब दूंगी ? पति ने सोचकर "मैं आया इसी निशानी के रूप में मुद्रिका दे दी" साथ में आश्वासन दिया "तूं निर्भय रहना।" मैं बैरी को जीतकर जल्दी वापस आऊँगा, कुछ विचार न करना, सुख में रहना इसी प्रकार कहकर वापस अपने शिविर में आ गया और आगे प्रस्थान कर दिया।

अंजना की गर्भ वृद्धि देख सासु ने उसकी प्रताड़ना-तिरस्कार कर कहा रे दुष्टा मेरे कुल को कलंक लगाने वाली गर्भ वृद्धि किस प्रकार हुयी वह कह ? तेरा पति तो देशान्तर गया है तभी अंजना ने सभी वृत्तान्त सुनाकर आखिर पति ने दी मुद्रा दिखायी ।

कर्म की हो वक्र लोटी ।
कौन माने पति की है बीटी ।।

जैसे अग्नि में घी डाले तो अधिक तेज अग्नि होवे इसी प्रकार सासु को अंजना की यह बात सुन अधिक कोप आया । हे कुकर्मी ! कुकर्म करके पुनः अपना मनमाना जवाब देती है तेरे वचन पर मुझे विश्वास नहीं है । सासु ने कर्कश वचन कहा और अपने पतिदेव को समझाकर अंजना सुन्दरी को रथ में बैठाकर महेन्द्रपुर भेज दी । महेन्द्रपुर में अपने पिता ने दोषित लड़की को नहीं रखा ।

रे कर्म होय वांका ।
तो क्या करे काका ।।

अंजना के साथ वसंततिलका दासी को देकर नगर के बाहर भेज दी । अंजना अपने पूर्वकृत कर्म को दोष देकर अरण्य में रहने लगी । रे विधाता ! रे कर्म !

एक दिन एक तपस्वी को देखा, वंदन किया तत्पश्चात् धर्मोपदेश सुना बाद में अपनी दासी द्वारा पूछने लगी कि यह पूर्व जन्म में अंजना ने क्या कर्म किया है कि जिससे ऐसा कलंक आया ? गर्भ में आया जीव कौन है ?

सावधान बनकर सुन ! एक गाँव में कनकरथ नामक राजा था उन्हें लक्ष्मोवती और कनकोदरी नामक दो स्त्री थी । लक्ष्मीवती प्रभु भक्ता थी । एक दिन प्रभू की प्रतिमा का पूजन कर रखो प्रतिमा को कनकोदरी ने लेकर गुप्त स्थान में रख दी । प्रतिमा गुम हो गई इसी से लक्ष्मीवती को बहुत ही दुःख हुआ । कनकोदरी ने साध्वी के मुख से प्रतिमा हरण का पाप सुनकर खिन्न बनी पुनः प्रतिमा को स्वस्थान पर रख दी । धर्म का बोध होने से मरकर देवलोक में उत्पन्न हुई । देवी के रूप में वहाँ से च्यवकर वही कनकोदरी तेरी सखी अन्जना सुन्दरी बनी और उसी प्रतिमा हरण के कर्म से यह दुःख भोगना पड़ा । अभी प्रायः पूर्ण होने आया है अतः अधिक पुण्य कार्य करें और बाईस साल का पतिदेव का वियोग पूर्ण होगा ।

उनके उदर में आया जीव भी देवलोक से च्यवकर आया है जो महापुण्यशाली है इसी जन्म में

मोक्ष पायेगा। यह सुनकर अति हर्षित बनकर अधिक पुण्य करने लगी।

गुफा में एक पुत्र का प्रसव हुआ एक बालक का जन्म हुआ वह रुदन करने लगा। सुनकर प्रतिसूर्य नामक विद्याधर वहाँ आया उसने अपनी भगिनी समान गिनकर नया प्रसूत बालक के साथ उसे अपने विमान में बैठाकर अपने स्थान में ले जा रहा था। बालक तो अविचल स्वभाव के होते हैं तो विमान में माँ की गोद में बैठा लड़का गिर गया। माँ रोने लगी तभी प्रतिसूर्य ने विमान रोककर बालक को लेने के लिए गया तो बालक शिला पर पड़ा था वह शिला टूट गई लेकिन बालक को कुछ चोट न लगी। वह देखकर आश्चर्यचकित हो गया। तत्पश्चात् लड़के को लेकर अपने हनुमन नगर में आया। इसी कारण से प्रसूत बालक का नाम हनुमान रक्खा। क्रम से मामा के यहाँ वृद्धि पाने लगा। पवनंजय रावण के साथ–साथ जाकर युद्ध खेलकर स्वयं अपने नगर वापस आया तभी इसने सभी बात सुनी और दुःखित हुआ और अन्जना को खोजने के लिए अपने श्वसुर के वहाँ गया। वहाँ भी अन्जना नहीं मिली जिससे बन-बन में भ्रमण करने लगा। न मिलने से अति व्यग्र और शोकाकुल रहने लगा। तभी मित्र ने

उपहास किया, न मिले तो आप क्या करोगे ? पवनंजय ने कहा न मिलेगी तो मरण के शरण होऊँगा । यह बात सुनकर प्रहलाद राजा भी अन्जना की खोज के लिए विद्याधरों के साथ निकला । भ्रमण करते-करते एक जंगल में आया तो अपना पुत्र पत्नि के विरह में मरने के लिए अग्नि की चिता सजा रहा था ।

मरने के लिये तैयार हुए पुत्र को पिता ने कहा—अबोध बालक के समान ऐसा मरण के शरण होगा तो दुर्गति होगी । मैंने सुना है कि गले में फंदा लगा कर, जल में, अग्नि में प्रवेश कर तथा तृषा और क्षुधा से, पर्वत पर से जंपापात कर मृत्यु पाने वाला नरक गति में जाता है । यदि साथ में शुभ भाव हो तो व्यंतर होता है ।

पवनंजय पत्नि के विरह में अग्नि-प्रवेश कर रहा है ऐसी बात प्रतिसूर्य ने सुनी तो शीघ्र ही अंजना सुन्दरी को लेकर वहां आ गया । अंजना सुन्दरी को देखकर पवनंजय आदि सभी हर्षित हुए और प्रतिसूर्य के आग्रह से प्रहलाद राजा, पवनंजय आदि राजा हनुमन नगर में आये बाद में सभी राजा अपने-अपने नगर गये लेकिन पवनंजय अपने पुत्र के साथ वहां रहा । हनुमान सर्व का प्रीति पात्र बनने लगा, काल क्रम से

अनेक विद्याएं भी अर्जित की। एक बार वरुण के संग्राम में हनुमान का बल देखकर रावण अति संतुष्ट हुआ और प्रशंसा की।

तत्पश्चात् पवनंजय अपनी स्त्री तथा पुत्र को लेकर अपने नगर में आया। माता-पिता को नमस्कार किया।

एक बार सीता का हरण हुआ। इसी कारण से हनुमान जाकर राम को मिला और अपने सर्व बल से सान्निध्यकर सीता को लाने में योगदान करु ऐसा समझ कर राम के पास जाकर कहने लगा। हे देव ! मैं क्या करू ?

आप आज्ञा दो तो मैं पूरी लंका को उड़ाकर लाऊं।

आप कहो तो जम्बू द्वीप को उठाकर लाऊं, आप कहो तो पूरा सागर पी लूं, विन्ध्याचल को या सुवर्ण पर्वत को उठाकर सागर में डाल दूं और इसी प्रकार सागर को भी बांध लूं, यदि आप कहें तो पाताल में जाकर सुधारस लेकर आऊं या चन्द्र को पीड़ाकर अमृत लेकर आ जाऊं, आप इच्छे तो सूर्य की किरणों को निवारण कर आऊं, आप कहो तो थल को चूर्ण कर दूं। इसप्रकार राम को सेवा का मौका देने

की विनती की और राम की सेवा कर लंका के विजय में अपनी खूब-खूब सेवा समर्पित की।

पवनंजय ने अपने पुत्र हनुमानको राज्य प्रदान किया और दीक्षा ग्रहण कर मुक्ति पायी।

अंजना सुन्दरी ने भी चंद्रसूरि मुनि के पास दीक्षा ग्रहण कर तीव्र तप-त्याग से सर्व कर्म क्षय करके मुक्ति पद प्राप्त किया।

हनुमान ने बहुत दिनों तक राज्य पालन कर अपने पुत्र को राज्य गद्दी सौंप कर देवसूरि के पास दीक्षा ग्रहण कर तप में उद्यत विहार करते-करते श्री शत्रुंजय तीर्थ पर आये वहां पर केवल पाकर मुक्ति महल में निवास किया।

मन का संयम बड़ा दुष्कर है। कारण मन बड़ा चंचल है। दस चंचलों में मन सर्वाधिक चंचल होता है। दस चंचल इस प्रकार हैं यथा—

"मनो मधुकरो मेघो, मानिनी मदनो मरुत।
मा मदो मर्कटो मत्सो, मकरा दस चंचला।।"

श्री देवी

श्रीपुर नगर में श्रीधर नामसे प्रसिद्ध राजा राज्य करता था उनकी श्री देवी नामक रानी थी ।

एक दिन राजा अपनी प्रिया के साथ उद्यान में क्रीड़ा करने लगा । वहां कमलकेतु नामक विद्याधर अकस्मात् श्रीदेवी का हरणकर अपने स्थान में ले गया । बाद में भोग करने के लिए प्रार्थना करने लगा ।

कहा है न जो अपने अधीन स्त्री है उसे छोड़ कर अन्य की स्त्री में आसक्ति रखता है, भोग भोगता है वह जल से परिपूर्ण सरोवर को छोड़कर घट में से पानी पीने वाले काक की तरह है । जिस पुरुष ने पर स्त्री के सामने नजर डाली उसने अपनी आत्मा को धूल में डाल दिया, संबन्धियों को छेड़ दिया और अपने मस्तक को शर्म से ढककर रखता है ।

विद्याधर की प्रार्थना श्रवणगोचर न हो जाय इसी कारण से श्रीदेवी अपने कान में अंगुली डालकर विद्याधर को निषेध करने लगी । ऐसा कुवाक्य न बोल

परस्त्री गमन ही सही अर्थ में नरक में गमन है और शीयल का पालन ही स्वर्ग का सोपान है ।

अहाहा ! जो पुरुष ब्रह्मचारी होते हैं वैसे पवित्र पुरुष को विमानवासी देव, ज्योतिषी देव, भुवन-पति देव, वृक्ष आदि में रहने वाले यक्ष, माँस आदि भक्षण में तत्पर राक्षस और व्यन्तर-किन्नर, देवलोक के गवैया, गन्धर्व आदि देवतावृन्द नमस्कार करते हैं ।

श्री देवी का वचन सुन प्रमोदित बने विद्याधर ने श्री देवी को अपनी नगरी श्रीपुर में रख दिया ।

श्रीदेवी के अनुपम रूप लक्ष्मी को देखकर एक दिन देव ने आकर श्रीदेवी से कहा मैं तेरा अर्थी आशिक हूं तू मेरे साथ चल जिसमें तेरा अच्छा है ।

श्रीदेवी ने कहा आप देव हो और मैं मानुषी अपना दोनों का संगम नहीं बन सकेगा ? और मेरे प्राण का नाश हो जाय तो भी मेरे पति के सिवा अन्य किसी की इच्छा भी नहीं रखती । मनसा, वचसा और काया से इसप्रकार की श्रीदेवी की वाणी सुनकर संतुष्ट हुआ । देव ने कहा "तूं महासती है" कहकर अपने स्थान में चला गया ।

श्रीदेवी ने अपने शीयल की रक्षा कर ली। मरण पाकर शीयल के प्रभाव से पंचम देवलोक में उत्पन्न हुई।

वहां से च्यवकर श्रीदेवी का जीव वीरपुर नगर में भद्र श्रेष्ठी के घर में मदनकुमार के रूप में अवतरित होगा। वहां पर गुरुदेव के योग से वैराग्य वासित बनकर प्रव्रज्या स्वीकृत कर तपस्या द्वारा सकल कर्मों का क्षय कर मुक्ति को पायेगा।

❖

पापस्य विनाशमाकांक्षेत्

कौन सी आकांक्षा है ?

जीवन में क्या करने का लक्ष्य बनाया है ? मानव जीवन में कौन सा पुरुषार्थ करने की तमन्ना है ? क्या पापों का नाश करने की तमन्ना है ?

पाप नाश की आकांक्षा से पुरुषार्थ करने का है इस जीवन में। नये पाप करने के नहीं हैं और पुराने पापों का नाश करने का है। अनंत अनंत जन्मों में किये हुए पाप पड़े हैं आत्मा में। त्याग, तप और स्वाध्याय-ध्यान से पापों का नाश होता है।

जीवात्मा जो जो दुःख अनुभव करता है, उन दुःखों का कारण है पाप। पापाद् दुःखम् ! दुःखनाश का सच्चा उपाय पापनाश है। 'मुझे इस जीवन में पापनाश का प्रबल पुरुषार्थ करना है।' ऐसा संकल्प करें। ❖

पुण्यच्छेदेऽथवा सर्वं प्रयाति विपरीतताम्

सब कुछ बदल गया है क्या ?

संपत्ति चली गई और विपत्ति आ गई है क्या?

स्नेही स्वजनों का स्नेह चला गया और वे पराये बन गये हैं क्या ?

तन का आरोग्य चला गया और रोगों से देह भर गया है क्या ?

समाज में मान-सम्मान नहीं रहा और बदनामी ने जकड़ लिया है क्या ?

आप के साथ प्रेम से बातें करने वाले अब आपको तिरस्कार से घूरते हैं क्या ?

ऐसा क्यों हुआ ?

आपके पास पहले जो 'पुण्यकर्म' था, वो पुण्यकर्म समाप्त हो गया है ! इससे यह सब कुछ बदल गया है । नये 'पुण्यकर्म' की गठरियां बाँधने का काम करो ।

ज्येष्ठा

जो जीव तन-मन और वचन से शीयल व्रत का शुद्ध पालन करता है वह ज्येष्ठा की तरह कल्याण-कारी सुख-संपत्ति प्राप्त करता है ।

ज्येष्ठा कौन है वह जानकारी करें ।

कुंडग्राम (क्षत्रियकुंड) में सिद्धार्थ नामक नृपति था जो न्याय पथ से अपनी पृथ्वी का पालन करता था । त्रिशला नामक पट्टरानी ने शुभ स्वप्न सूचित एक पुत्र को जन्म दिया । पुत्र का जन्मोत्सव मनाकर नंदिषेण नाम स्थापन किया । कालक्रम से नंदि-षेण कला विद्या वय से वृद्धिगत होने लगा ।

कालान्तर में त्रिशला रानी ने चौदह महा-स्वप्नों से सूचित एक पुत्र को जन्म दिया और छप्पन दिक्कुमारिकाओं तथा चौसठ इन्द्रों ने मिलकर जन्मोत्सव किया तत्पश्चात् दस दिन का महोत्सव मनाकर माता-पिता ने वर्धमान नाम स्थापन किया ।

इसी समय विशाला (वैशाली) नगरी में चेटक राजा राज्य करता था उसे ज्येष्ठा नामक रूप-लावण्य तथा गुणों से युक्त पुत्री थी वह यौवन के वन में प्रवेश करने लगी तभी अपने मंत्री से पूछा—यह कन्या का लग्न किसके साथ करेंगे ।

मंत्रिवर्य ने कहा—कुंडग्राम में सिद्धार्थ राजा का पुत्र नंदिवर्धन है वह ज्येष्ठा के लिए योग्य है। मंत्री की सलाह को उचित समझकर तुरन्त दूत भेजकर समाचार भेजे कि अपने पुत्र नंदिवर्धन का विवाह हमारी पुत्री ज्येष्ठा से करने का विचार है। सिद्धार्थ ने भी सोचकर अनुमति प्रदान की। नंदिवर्धन तथा ज्येष्ठा का धूम-धाम पूर्वक पाणिग्रहण हुआ।

वर्धमान कुमार का यशोदा के साथ धूम-धाम पूर्वक लग्न हुआ लेकिन वैराग्य वासित वर्धमान कुमार ने तीस साल की भर यौवन में यशोदा का त्यागकर महाभिभष्क्रमण याने दीक्षा स्वीकार की तत्पश्चात् साढ़े बारह साल तक घोर तपश्चर्या कर, चार घाति कर्म क्षयकर तीर्थंकर बने, सर्वज्ञ बने, सर्वदर्शी बने।

एक दिन तीर्थंकर वर्धमान स्वामी के पास धर्मोपदेश सुनने गयी। प्रभू ने धर्म का माहात्म्य प्रस्तुत करते हुए कहा—धर्म से सत्कुल में जन्म, शरीर में निरोगता, पंचेन्द्रिय पटुता, सौभाग्य, दीर्घ आयुष्य, बल, निर्मल यश, विद्या दान की संपत्ति प्राप्त होती है।

किया हुआ धर्म महा अरण्य में महामय में अपना निरन्तर रक्षण करता है तथा स्वर्ग और शिवसुख प्रदान करता है।

धर्मोपदेश सुनकर ज्येष्ठा ने सम्यक्त्व के सह बारह व्रत युक्त श्रावक धर्म स्वीकार किया ।

एक दिन इन्द्र सभा में इन्द्र ने ज्येष्ठा की शीयल धर्म की प्रशंसा करते हुये कहा शीयल व्रत से इन्सान तो क्या देव भी चलित नहीं कर सकता ज्येष्ठा को ।

एक देव को हुआ बड़े लोग तो बोलना ही समझते हैं चलो पृथ्वी पर जाकर ज्येष्ठा को शीयल व्रत से खंडित करें ।

देव ज्येष्ठा के पास आकर उसका हरण कर जंगल में ले गया और वहाँ पर वह अपनी महान् ऋद्धि का दर्शन कराने लगा—हस्ती, अश्व, पायदल आदि की महासेना का निर्माण किया और ज्येष्ठा को कहने लगा—

हे मृगनयने ! तू यहाँ पर अकेली है यहाँ पर तूने मेरी संपत्ति का दर्शन किया न !

बस अभी तू मेरी प्राणवल्लभा बनकर मुझे सुखीकर और तू भी सुखी बन ।

ज्येष्ठा ने यह सब बातें अनसुनी कर अपनी व्रत निष्ठा को प्रकट करती हुई कहने लगी, सुनले—

गगन में से यदि देवकुमार आ जायें तो भी मैं मेरे पति को त्यजकर अन्य के साथ रमण नहीं करूंगी।

प्रलोभन से जब चलित नहीं हुई तो बल से चलायमान करने के लिए तत्पर बना कहने लगा—

तूं अकेली है और मैं तेरे साथ बलात्कार कर दूँ तो क्या कर सकती है।

ज्येष्ठा महासती सिंहनी समान गर्जती हुई कहने लगी—

अरे तूं बलात्कार करने के लिए जब तत्पर बनेगा तभी तुझे मेरा शरीर मिलेगा, शव मिलेगा, मृतक मिलेगा, आत्मा नहीं, मैं आत्म हत्या कर लूंगी, मेरे प्राणों का बलिदान कर दूंगी।

प्रलोभन और बल से नहीं मानी तभी उनकी शीयल व्रत की निष्ठा पर अति हर्षित होकर देव प्रकट हुआ और कहने लगा—

हे पुण्यशाली तुझे धन्य है, तुझे धन्य है, तू महासती है। तुझ पर प्रसन्न होकर मैं तुझे देवी कुंडल देता हूँ।

देवी कुंडल के साथ उनके स्थान में रखकर आया और साथ में कहा आपकी यह पत्नि महासती है। मैंने उनको शीयल व्रत से खंडित करने का अथक प्रयत्न किया लेकिन वह तो मेरु समान अपना शीयल व्रत पालन में स्थिर रही, चलित नहीं हुई। इस प्रकार प्रशंसा कर देव स्वर्ग स्थान में चला गया।

ज्येष्ठा महासती ने वर्धमान स्वामी के पास प्रव्रज्या स्वीकार कर सर्व कर्म का क्षय किया और मोक्ष में गई।

माता और पिता

यदि देखा जाए तो बालक की आदर्श मूर्त्ति उसके माता और पिता होते हैं। माता की भूमिका उसके चरित्र निर्माण में महत्वपूर्ण होती है। जार्ज हरबर्ट ने कहा है कि अच्छी माता सौ अध्यापकों से भी बढ़कर होती है। यह शिक्षा मौन होती है क्योंकि माता की क्रियाओं का प्रभाव बालक के हृदय पर पड़ता है। घर का चारित्रिक वातावरण माता पर आश्रित है। सुशीलता, दयालुता, चातुर्य, कार्यकुशलता, संतोष आदि जो चरित्र के आवश्यक गुण हैं, माता से ही प्राप्त होते हैं। धैर्य व आत्म-संयम के पाठ की व्यावहारिक शिक्षा घर पर ही मिलती है।

तल्लीनता

एक बार साइरेक्युस के राजा डायोनिसियस ने ग्रीस देश के महान् दार्शनिक प्लेटो को अपने दरबार में बुलाया। वहां जाकर प्लेटो ने राजा को समझाया कि कोई सयाना और समझदार राजा अपना राज्य कैसे चला सकता है ?

प्लेटो की क्रांतिकारी बातें सुनकर डायोनिसियस चौंक उठा। उसने सोचा ऐसे आदमी को जीवित रखना खतरनाक है। इसलिए उसने प्लेटो को फांसी की सजा दे दी।

परन्तु प्लेटो के कुछ मित्रों ने राजा को समझाया तब उसने प्लेटो को गुलाम के रूप में बेच देने का हुक्म दिया। सौभाग्य से प्लेटो को खरीदने वाला मालिक दयालु था। उसने प्लेटो को गुलामी से मुक्त कर दिया और एथेन्स जाने की इजाजत दे दी।

प्लेटो एथेन्स पहुंच गये। उसके बाद डायोनिसियस ने उन्हें एक पत्र लिखकर बताया। "आपकी बात को समझने में मैंने बड़ी गलती की है। इसलिए आप मुझे क्षमा करें। मेरे कारण आपको जो दुःख हुआ उसे भूल जाँय और मेरे लिए मन में सद्भावना रखें।" प्लेटो ने पत्र के उत्तर में लिखा—

"जीवन के सत्य की शोध में इतना रचा-पचा रहता हूं कि आपके विषय में किसी प्रकार का विचार करने में समय बिगाड़ने का मुझे समय ही नहीं मिलता।"

सुज्येष्ठा

निरन्तर भाव के सह जिनेश्वर प्रभु ने प्ररू-पित धर्म का पालन करने वाले भविकजन सुज्येष्ठा की तरह अक्षयस्थान मोक्ष प्राप्त करते हैं।

सुज्येष्ठा राजा चेटक की पुत्री थी। राजा चेटक भी विशाला नगरी का राजा था। सुज्येष्ठा की एक बहन थी चेल्लणा। दोनों साथ में रहती थी, साथ में खाती थी, साथ में पीती थी दोनों में स्नेह भाव अद्वितीय था।

चेल्लणा को प्रपंचकर श्रेणिक राजा ने लग्न किया था। चेल्लणा के विरह से सुज्येष्ठा में संसार के प्रति असारभाव जागृत हुआ और संयम अंगीकार कर लिया। चंदनबाला को अपनी गुरुणी के रूप में स्वीकृत किया। उग्र तपस्या करने लगी। कभी २ बस्ती में ढ़ाबा पर जाकर आतपना लेती थी। गुप्त रीतया आत-पना लेकर जिनेश्वर के शासन की उन्नति कर रही थी। आतपना लेने अगारन में सुज्येष्ठा बैठी थी। इसी समय

एक सिद्ध अंगे अवध्य विद्याधर था । निष्काम ब्रह्मज्ञान का जानकार भी था । अपनी सिद्ध की सर्व विद्या को धारण कर सके ऐसे पात्र की खोज कर रहा था । उनका नाम पेढ़ाल था । वह विमान से गगनमार्ग से आगे बढ़ रहा था कि अकस्मात् उसकी पैनी दृष्टि सुज्येष्ठा पर गिरी और वह उसके प्रति आकर्षित-मोहित हो गया और उसके साथ संभोग करने को तीव्र इच्छा हुई ।

पेढ़ाल तो था विद्याधर और विद्या के बल से भ्रमण कर तप तपती सुज्येष्ठा के योनि में प्रवेश कर अपना वीर्य स्थापन कर दिया ।

सुज्येष्ठा की गर्भ वृद्धि होने लगी अन्य साध्विओं को गर्भ के चिन्ह दिखने लगे । अपनी गुरुनी ने कहा हे पापिष्ठे ! तूने यह अकार्य कैसे किया ?

सुज्येष्ठा ने कहा—रे महासतीजी ! क्या कहूं मेरी बात । मैंने शरीर से शीयल का खंडन तो किया नहीं है और मन से भी शीयल खंडित नहीं किया है, लेकिन मुझे भी यह कर्म की अजीब करामात मेरे ख्याल में नहीं आती ।

सर्व साध्वी संघ मिलकर भगवन्त के पास जाकर प्रश्न करती है ।

सुज्येष्ठा सती है या असती ?

भगवान ने अपने केवलज्ञान द्वारा कहा—यह सुज्येष्ठा साध्वी सर्व सती स्त्रिओं में मुख्य है, लेकिन किसी विद्याधर ने उसकी विद्या से सुज्येष्ठा की योनि में वीर्य स्थापन किया है। तत्पश्चात् सुज्येष्ठा की गर्भ वृद्धि होने लगी। कालक्रम से श्रावक के घर सुज्येष्ठा की प्रसूति हुई और पुत्र का जन्म हुआ। पुत्र का नाम "सत्यकी" रखा।

सत्यकी साध्विओं के साथ प्रभू महावीर की वाणी सुनने के लिए समवसरण में जाता था। एक दिन सत्यकी साध्विओं के साथ प्रणाम कर बैठ रहा था तभी कालसंदीपन विद्याधर ने प्रभू से प्रश्न किया। प्रभो ! मेरी मृत्यु किसके हाथ से होगी ?

प्रभू ने भी सहजभाव से उत्तर दिया—समवसरण में रहा सत्यकी के हाथ से तेरी मृत्यु होगी। कालसंदीपन सोचने लगा क्या इतना छोटा बालक मेरी मृत्यु का कारण बनेगा यह कौतुक लगता है।

सत्यकी अतिबुद्धिमान था। साध्वियां ग्यारह अंग पढ़ती थी तभी स्वयं बुद्धि में धारण करता रहता था। ग्यारह अंग का ज्ञाता बन गया तथा पूर्वभव के

संस्कार के कारण शीघ्राति शीघ्र विद्या सिद्ध करने लगा उसकी तीव्र लगन और प्रयत्न देख देव ने प्रत्यक्ष होकर कहा तूं केवल रोहिणी विद्या सिद्ध कर जिससे हम तुझे सान्निध्य कर सकेंगे और यह रोहिणी विद्या की साधना तूं सात भवों से कर रहा है। तूं यह विद्या की साधना करने वाला होने से पाँच भव से पातकी कहकर तेरा हनन किया गया था। छठे जन्म में रोहिणी विद्या की साधना की और सिद्ध हुई, प्रत्यक्ष हुई परन्तु तेरा आयुष्य केवल छह मास का होने से तूं ने स्वीकार नहीं की। यह साधना इसी सातवें जन्म में सिद्ध होगी।

देव का वचन सुनकर सत्यकी एक चिता तैयार कर आह्वान करने लगा मैं रोहिणी विद्या को सिद्ध करने हेतु अग्नि में प्रवेश कर रहा हूं तत्पश्चात् अपना अंगूठा अग्नि के सामने रखकर विद्या का जाप करने लगा।

इसी समय काल संदीपन विद्याधर अग्नि में बहुत काष्ठ डालने लगा, कारण कि यह सत्यकी जल जाय। अति विघ्न आने पर भी सातवें दिन में विद्या देवता प्रकट हुआ। विघ्नकर्ता काल संदीपन को अटकाया और कहा मुझे तेरा एक अंग बता जिससे मैं तेरे शरीर में प्रवेश करूं। सत्यकी ने अपना कपाल

दिखाया अतः कपाल द्वारा उसके शरीर में प्रवेश किया इसी कारण से वह तीसरे नेत्र जैसा दिखने लगा और लोक में त्रिलोचन नाम से प्रसिद्ध हुआ। तत्पश्चात् अपनी ब्रह्म निष्ठ माता को कलंकित करने वाले विद्याधर को जानकर उसे हरने का विचार किया तथा विद्या से बलिष्ठ सत्यकी काल संदीपन को हरने हेतु इधर-उधर फिरने लगा। कालसंदीपन भयभीत बनकर अपने तीन नगर को रक्षित कर रहने लगा लेकिन सत्यकी ने तीनों नगरों को जला दिया। विद्या प्रभाव से संदीपन ने सागर में प्रवेश कर दिया लेकिन सागर में रहे हुए संदीपन को सत्यकी ने हनन कर दिया और मरकर नरक में गया।

सत्यकी भी अपने विद्या के प्रभाव से उनके तपस्विओं की पत्निओं के साथ भोग-भोगने लगा। यदि कोई विरोध करे तो उसे जला देता था इतना प्रबल स्त्री लपंट होने पर भी भिक्षु वेष धारण करता था। उसके दो मित्र थे नंदिश्वर तथा नंदि।

एक दिन विद्या के बल से पुष्प केतन नामक विमान बनाकर उसमें बैठकर उज्जैयिनी नगरी में आया जहाँ चंडप्रद्योत का राज्य था। चंडप्रद्योत के अन्तःपुर

में जाकर शिवा नामक रानी को छोडकर अन्य सभी रानियों के साथ विषय भोग भोगा यह वृत्तान्त सुनकर चन्द्रप्रद्योत को प्रति क्रोध चढ़ा और मारने के लिए उद्घोष कराया। उमा नामक वेश्या ने सत्यकी को मारने का वचन दिया।

तत्पश्चात् सत्यकी को मारने के लिए अनेक योजनाएं विचारने लगी और मारने का छल खोजने लगी। एक दिन गवाक्ष में खड़ी थी, विमान मार्ग से जाते सत्यकी ने उसे देखा और विषय भोग भोगने की इच्छा हुई वहाँ उमा के पास आकर अपने विमान में बैठाकर ले गया और उसके साथ विषय सुख भोगने लगा। उमाने पाँच बाण रखा वह सत्यकी ने ग्रहण किया और जगत् को वश में कर दिया।

वेश्या के साथ सत्यकी बहुत समय तक रहा जिससे वेश्या के साथ विश्वास बैठ गया। एक दिन सहजभाव बताती वेश्या ने पूछा—आपको विद्या प्रति समय आपके साथ रहती है। सत्यकी ने विश्वास में आकर सत्य बात कह दी जब तन समागम होता है तभी विद्या मेरे से दूर रहती है इसके सिवा साथ में रहती है।

उमा ने यह बात राजा को कही साथ में यह बात कही कि—उसी समय विद्या खड्ग में रखता है। इसी कारण से सत्यकी का हनन हो सकता है।

राजा के अपना एक विश्वसनीय सेवक था जो हनन में बहुत ही होशियार था जो अनेक पत्रों में से एक लक्ष्य किये हुए पत्र का हनन कर सकता था। उसे कहा—तू इसीप्रकार सत्यकी का हनन कर कि जिससे उमा गणिका को थोड़ा सा भी दुःख न होवे। सेवक विश्वास के साथ वध करने के लिए उमा के पास पहुंचा। सत्यकी उमा के साथ भोग भोगने में मस्त बना अपनी विद्याको खड्ग में रखा था। इसी समय सत्यकी को खींचकर वध कर दिया।

यह बात सुनकर उसका मित्र नंदीश्वर वहाँ आया और चंडप्रद्योत को तथा उसकी नगरी का नाश करने को तत्पर बना शिला लेकर खड़ा था।

चंडप्रद्योत राजा ने विनती की—तभी नंदीश्वर ने कहा मेरे स्वामी को जिस अवस्था में हनन किया उसी अवस्था में परिवार सहित मूर्ति बनाकर पूजा करो तो शिला रखूं। चंडप्रद्योत राजाने उसे स्वीकार किया।

नंदीश्वर गाँव गांव में अपने स्वामी की ऐसी मूर्ति बनाकर पूजा कराने लगा। आज तक वह पूजा होती है।

महासती सुज्येष्ठा ने श्री वीर प्रभु के उपदेश से नानाविध तपश्चर्या कर अनुक्रम से कर्म क्षय कर केवलज्ञान प्राप्त किया तथा मोक्ष में गयी।

चंडप्रद्योत राजा की रानी शिवा ने प्रभू महावीर स्वामी के पास दीक्षा ग्रहण की और तीव्र तपस्या द्वारा सकल कर्म क्षय कर शिवसुख की भोक्ता बनी।

❖

शक्ति

* शक्ति द्वारा शत्रु पर विजय प्राप्त करना अधूरी विजय है। —मिल्टन
* जिसके पास अपनी शक्ति नहीं, उसे भगवान भी शक्ति नहीं देता। —ले हण्ट
* धैर्य और सज्जनता ही शक्ति है। —गेटे
* शक्ति आत्मा के अन्दर से आती है, बाहर से नहीं। —टैगोर
* जिसमें सोचने की शक्ति खत्म हो गई है, समझ लीजिये वह व्यक्ति बरबाद हो चुका है। —सुकरात

मृगावती

जिसप्रकार मृगावती ने अपने अभीष्ट कार्यों की निंदा की उसीप्रकार जो प्राणी अपने कर्मों की निंदा करते हैं वे अद्भुत केवलज्ञान को प्राप्त करते हैं।

साकेत नामक सुप्रसिद्ध नगर था। सुरप्रिय नामक यक्ष का निवास स्थान था। प्रति साल वहां लोग यात्रा करते थे। यात्रा में चित्रकार उसका विचित्र रूप चित्रित करता था तत्पश्चात् चित्रकार को हनता था। चित्र चित्रित नहीं करते तो पूरे साल नगरजनों का हनन करता रहता था। इसीप्रकार चित्रकारों का हनन देख अनेक चित्रकारों ने नगर का त्याग कर दिया लेकिन राजा ने पुन: सभी चित्रकारों को बुलवा लिया और राजा ने सभी चित्रकारों का नाम लिखकर एक कुंभ में भर दिया और मेले के दिन जिस चित्रकार का नाम निकले उसे यक्ष हनन करे ऐसा क्रम बनाया गया। इसीप्रकार बहुत काल व्यतीत हुआ।

कौशांबी नगरी से एक चित्रकार चित्रकला सीखने के लिये साकेत नगर में आया। अपना नाम

बदलकर एक वृद्धा के वहां निवास किया और चित्र-कला सीखने लगा । इसी साल वृद्धा के पुत्र की चिट्ठी निकली उसे लेने के लिये मानों यमदूत आ रहे हों इसी प्रकार राजसेवकों को देखकर वृद्धा अपनी छाती कूटती, विलाप करती रो रही थी विदेशी चित्रकार ने पूछा—रोने का क्या कारण है ?

वृद्धा ने पूरी बात बतायी ।

विदेशी चित्रकार साहसी और हिम्मती होने से चित्र बनाने हेतु स्वयं जायेगा । इसीप्रकार की बात कर विदेशी चित्रकार जाने हेतु तैयार हुआ ।

दो उपवास की तपश्चर्या की ।

स्नानादि से पवित्र बनकर उत्तम प्रकार के केशर, चन्दन, रंग-प्रभृति सुगंधित द्रव्य लेकर नयी-नयी पिछियों के साथ यक्ष के मंदिर में आया । एकाग्र चित्त हो शुद्ध भाव से यक्ष का सुन्दर रंग-बिरंगे कलरों से आर्कषित चित्र आलेखित किया । तत्पश्चात् पूजा की । पूजा के बाद करबद्ध होकर प्रार्थना करने लगा ।

हे यक्षाधिराज ! मेरी मति कल्पना से मैंने आपका चित्र बनाया है और उसमें कोई ऋद्धि या क्षति रही हो तो क्षमा करें और मुझ पर प्रसन्न हों । आप

ही तीन भुवन का हित करने वाले हो। आपकी कृपा दृष्टि से सब शुभ ही होता है।

चित्रकार की प्रार्थना से प्रमुदित बने यक्ष ने कहा–वरदान माँग ! आप तुष्ट हो गये हो तो आपको यह नरक गति में ले जाने वाला प्रजा का घात करने का बंद कर दो।

जीव की हिंसा नरकगति का पथ है।

जीव की दया स्वर्गगति का पथ है।

इसीप्रकार का वचन सुनकर हर्षित बने हुये यक्ष ने कहा—यह तो मेरे हित के लिए तथा लोक के हित के लिए है। आपने वरदान याचना की आप तो परोपकारी हैं लेकिन आपके लिए कुछ याचना करें। हे यक्ष ! आपने यह कार्य किया वह मेरा ही कार्य है यह सुनकर निस्पृही चित्रकार पर अत्यन्त प्रमोदित बना और कहा तेरे लिए कुछ न कुछ मांग। चित्रकार ने एक वरदान माँगा—

जिस मनुष्य का कोई भी एक अंग देख लूं उसका पूरा चित्र बना दूं। यक्षराज ने तथाऽस्तु कहकर वरदान दिया। यक्ष ने अभयदान दिया है। नगर में यह बात सुनकर लोगों ने चित्रकार की बहुत-बहुत प्रशंसा की और महोत्सव मनाया। मरण के नाम

से लोग भय पाते हैं, मरण आये तो कौन नहीं डरता ? सभी निर्भय बन गये ।

चित्रकार भी अनेक नगरों में परिभ्रमण करता एक दिन कौशांबी नगरी में आया और उसकी चित्रकला देखकर प्रमोदित हुए राजा ने अपनी चित्रशाला को विविध चित्रों से चित्रित करने के लिए चित्रकार को आदेश दिया । चित्रकार हाथी, सिंह, बाघ, मृग विविध प्रकार के पशुओं के आकर्षित रंग-बिरंगे चित्र तथा हंस, मयूर आदि पक्षिओं के मनोहर चित्र आलेखित कर रहा था । अकस्मात् गवाक्ष में रही शतानिक की पत्नि मृगावती के ऊपर चित्रकार की नजर चली गई और अंगूठा देख लिया । यक्ष का वरदान था एक अंग देखने पर पूरा चित्र बना सके । उसने मृगा-वती का चित्र ऐसा बनाया कि आपको भ्रम हो जाये । मृगावती के उस चित्र में एक आश्चर्यकारी घटना बन गयी । जाँघ पर एक तिल था जो काला दाग जैसा लगता था । चित्रकार से चित्र में जाँघ पर इच्छा न होने से वहीं पर दाग पड़ने लगा । बहुत प्रयत्न करने पर न निकला तभी समझ गया कि जरूर वहाँ लांछन होगा ।

राजा आकर्षक, मनो-मुग्धकर चित्र को देखकर अति हर्षित हुआ लेकिन जाँघ में काला लांछन

देखकर कुपित हुआ रे दुष्टाचारी ! कुकर्मी ! तूने मृगावती के साथ विषय भोग भोगा है । वरना जाँघ में लांछन कहाँ से मालूम हुआ ? ऐसा सोचकर राजा ने आक्रोश भरे स्वर में आदेश दिया । चित्रकार को जान से मार दो । चित्रकार को मारने ले जाने लगे तभी अन्य सभी चित्रकारों ने एकत्रित होकर राजा को कहा—हे स्वामी ! चित्रकार दुष्ट नहीं । यक्ष का वरदान है वह किसी भी मनुष्य के एक अंग के दर्शन से पूरा चित्र बना देता है ।

राजा ने परीक्षा के लिए कुब्जा दासी का मुख बताया तभी चित्रकार ने पूरा च्त्रि बना दिया ।

रुष्ट बना राजा शांत तो हो गया लेकिन पूरा शांत नहीं हुआ और एक अंगुली काटने का आदेश दिया ।

चित्रकार को बहुत क्रोध आया और धिक्कार देते कहा—ऐसा कुछ करूं जिससे उनका उनकी रानी से वियोग हो जाये ।

मृगावती का एक पट्ट पर सुन्दर चित्र आलेखित कर उनके शत्रु चंडप्रद्योतन के पास उपस्थित हुआ । चंडप्रद्योतन पट्ट देखकर सिर धुनने लगा । अहाहा क्या रूप ! क्या लावण्य ! क्या सौन्दर्य ! यह

किसकी प्रतिकृति है ? चंडप्रद्योतन ने पूछा। राजाजी ! राजा चेटक की पुत्री और राजा शतानिक की प्राण-प्यारी मृगावती की यह प्रतिकृति है। जितनी सुन्दर प्रतिकृति है इससे अधिकाधिक रूप है।

चंडप्रद्योतन को लगा इसके सिवा जीना मुश्किल है। शीघ्र ही अपना विश्वसनीय सेवक वज्र-जंघ को भेजकर संदेश कहलाया—

आपकी रानी मृगावती की चंडप्रद्योतन याचना करते हैं और यह मृगावतो आपके साथ शोभित नहीं बनती ऐसी लगती है। शीशे के साथ रहा मणि शोभता नहीं। उसीप्रकार तेरे साथ रही मृगावती नहीं शोभती। इसलिए मेरे पास भेज दो। मस्तक तो मुकुट से ही शोभित होता है।

अपने राज्य को रखना हो तो मृगावती को जल्दी सुपुर्द करो। विचक्षण तो वही है सर्व का नाश न करना हो तो एक वस्तु का नाश करने देना। शतानिक राजा अति कोपित बना वज्रजंघ से कहने लगा—तू मेरी बात चंडप्रद्योतन से जाकर कहना—जिस प्रकार शीशे के साथ मणि शोभित नहीं होता उसी प्रकार तेरे साथ भी मृगावती शोभित नहीं होती। तेरे अन्त:पुर को देखकर संतोष धारण कर। अल्प लेने के लिए कहीं

सभी का त्याग न करना पड़े इसीलिए विचक्षण हो तो समझ जाइये ।

दूत ने आकर चंडप्रद्योतन राजा को समाचार दिया । चंडप्रद्योतन ने अपने १४ राज्यों के साथ प्रयाण किया । ग्रीष्म ऋतु जिसप्रकार जलाशयों का शोषण करे उसी प्रकार सभी जलाशयों को शोषते-शोषते आकाश को धूल से आच्छादित करते हुये कौशांबी नगरी के नजदीक आ गये । तभी शतानिक भी सन्नद्ध होकर युद्ध भूमि में आ गया । युद्ध प्रारम्भ हुआ लेकिन चंडप्रद्योतन की बड़ी सेना देखकर स्वयं को आघात लगा और आघात से अतिसार रोग हुआ और अतिसार से शतानिक की मृत्यु हुई ।

स्वामी की मृत्यु हो गयी ।

बालक अभी छोटा है ।

बैरी तो बलवान है । किसी भी प्रकार से मुझे शीयल का रक्षण करना है इसी प्रकार विचार कर मृगावती ने एक दासी द्वारा समाचार भेजा—मेरे प्राण नाथ की मृत्यु हो गयी, पुत्र अभी छोटा है, मैं भी शोक मग्ना हूँ । पुत्र का राज्य होगा तभी तेरी इच्छा पूर्ण करूंगी । अभी

आपका कदाग्रह अच्छा नहीं है और अभी दुश्मन नजदीक है, अत जल्दी से "वापस जा" मृगावती के समाचार से प्रसन्न बना चडप्रद्योतन वापस चला गया।

तत्पश्चात् मृगावती ने अवंति तथा कौशांबी के बीच एक बड़ा किला बनवाया।

चंडप्रद्योतन ने अपने विश्वसनीय दूतों को लेने के लिए भेजा तभी मृगावती ने कहा—तुम्हारे राजा को जाकर कहो। मन से तो इच्छा करती नहीं और शरीर से कैसे करे? मैंने मेरी शीयल रक्षा के लिए प्रपंच माया की थी।

चंडप्रद्योतन दूत को खाली हाथ देखकर और यह संदेश सुनकर अति कुपित हुआ कौशांबी नगरी की तरफ युद्ध करने के लिए सैन्य के साथ चला और जब कौशांबी की सोमा में आया तभी चंडप्रद्योतन ने कहा तेरा, तेरे पुत्र का और तेरे राज्य की क्षेम कुशलता, कल्याण कारिता इच्छित हो तो तूं यहाँ पर आजा नहीं तो सभी चला जायेगा।

यह घटना घट रही थी इतने में सर्वज्ञ, सर्वदर्शी प्रभू महावीर स्वामी मृगावती की शीयल निष्ठा से कौशांबी में पधारे और समवसरित हुए।

चंडप्रद्योतन के भय से जो किले का दरवाजा बन्द कर रखा था वह मृगावती ने खुलवा दिया और प्रभू की वाणी सुनने हेतु गयी। देव-देवेन्द्र भी आये थे। प्रभू के प्रभाव से शत्रुता त्याग कर चंडप्रद्योतन राजा भी वाणि सुनने आया था।

प्रभू ने देशना दी। देशना सुनने एक भील भी वहाँ आया था। वह पूछने की इच्छा कर रहा था तभी प्रभू ने कहा पूछना हो तो पूछ।

उसने कहा—जो थी वो है ?

प्रभू ने कहा—हे भील ! हाँ जो थी वही है।

इसी समय गौतम ने कहा—

हे प्रभो ! इन प्रश्नों का उत्तर विस्तार से कहिए। चंपापुरी नगरी में एक स्वर्णकार धनवान् कन्याओं की खोज करने हेतु इधर-उधर, घूमते-घूमते धन दे-देकर पाँच सौ कन्याओं के साथ लग्न किया। प्रत्येक पत्नि को बहुमूल्य आभूषण बनाकर दिये थे लेकिन जिसके साथ स्वर्णकार भोग-भोगने का हो वही आभूषण परिधान करे।

एक दिन स्वर्णकार बाहर गया तभी सभी ने सर्व आभूषण परिधान किये। स्वर्णकार ने आकर देखा

तभी से वह द्वार पर ही बैठा रहता था कहीं पर नहीं जाता था। किसी को भोजन के लिए बुलाता नहीं था और किसी के यहाँ जाता नहीं था। पाँचसौ पत्नियाँ ऐसी दशा को कैद समझने लगीं।

एक दिन एक मित्र स्वर्णकार को अतिआग्रह से अपने गृह लेकर गया।

पाँचसौ पत्नियों को तो घी केला मिल गया। सभी आभूषण अलंकार आदि से सज्जित होकर दर्पण में मुख देखने लगीं। तभी स्वर्णकार आ गया और देखते ही अति क्रोधित बना एक पत्नि पर प्रहार किया तो वह मर गयी। सभी ने अपनी प्राणरक्षार्थ दर्पण का प्रहार किया जिससे स्वर्णकार मर गया तभी पश्चाताप से ४६६ स्त्रिओं ने अग्नि में प्रवेश कर, प्राण त्याग किये और अकाम निर्जरा से पुरुष रूप में उत्पन्न हुईं और चोर रूप में पल्लि में रहने लगे। प्रथम मरी पत्नि विप्रसुत के रूप में उत्पन्न हुयी और सुवर्णकार का जीव एक नगर सेठ के यहाँ पुत्री रूप में उत्पन्न हुआ।

दैवयोग से विप्रसुत नगर सेठ के वहाँ सेवक के रूप में रहने लगा। सेठ की पुत्री बहुत रोती थी उसको शाँत करने हेतु विप्रसुत उसकी योनि पर हाथ फिराता

रहता था जिससे रोना शांत करती थी और हँसने लगती थी।

सेठ-सेठानी ने यह कुचेष्टा देखकर विप्रसुत को निकाल दिया।

विप्रसुत भ्रमण करता वहाँ ४९९ के साथ शामिल हो गया और डकैती, चोरी आदि करने लगा।

एक दिन सेठ के वहाँ चोरी करने आया। धन लेने लगा तभी कन्या बोली—अकेला धन क्यों ले जाते हो मुझे भी ले चलो।

चोर उसे भी ले चले। अपने स्थान में ले आने पर अपनी स्त्री के रूप में रखी। ५०० चोरों ने उसके साथ विषय सुख भोगा लेकिन वह तृप्त नहीं हुयी। रे काम संज्ञा! चोरों ने सोचा अपन ५०० हैं और यह एक है अतः यह मर जायेगी ऐसा सोचकर एक अन्य स्त्री को ले आये लेकिन परिस्थिति उल्टी हुई कि वह स्त्री समझी मेरी काम सुख में बाधा डालने वाली सौत है अतः अवसर आने पर उसे खतम कर दूँ। एक दिन सभी चोर चोरी करने हेतु गये तभी उस स्त्री को कुएँ में डाल दिया।

सब चोर वापस आने पर पूछने लगे क्या हुआ ? स्त्री ने कहा मुझे क्या मालुम मैं क्या उसका रक्षण करने के लिए हूं ?

चोरों ने समझा इसका ही साहस है।

विप्रसुत ने मन में सोचा कि क्या यह वही है जिसकी योनि में हाथ फिरा-फिरा कर सुख देता था ?

गौतम—सर्वज्ञ भगवन्त यहाँ पर आये हैं ऐसा सोचकर यह पूछने आया था।

जो थी वही है ? मैंने कहा—हाँ वही है ?

यह सभी सुनकर विप्रसुत के दिल में वैराग्य की चिराग जली और दीक्षा अंगीकार की। विप्रसुत ने वहाँ जाकर प्रतिबोध देकर चोरों को भी चारित्र ग्रहण कराया।

मृगावती खड़ी होकर प्रभू को नमस्कार कर कहने लगी यदि चंडप्रद्योतन राजा की अनुज्ञा मिले तो मैं भी चारित्र ग्रहण करूं ?

चंडप्रद्योतन ने कहा—जैसी तेरी इच्छा ! तेरा पुत्र तेरे राज्य का अधिकारी होगा। मैं उसे विघ्न करने वाला नहीं बनूंगा।

इसी प्रकार प्रभू की वाणी से जिसका वैरश मन हो गया था ऐसे चंडप्रद्योत ने मृगावती के पुत्र उदयन को महोत्सव पूर्वक गद्दी नशीन किया। तत्पश्चात् मृगावती ने आठ रानियों के साथ दीक्षा ग्रहण की।

साध्वियों की दीक्षा ग्रहण हेतु चंदनबाला को सुपुर्द कर दी।

चंडप्रद्योत धर्म को स्वीकार कर स्व नगर में वापस गया।

पृथ्वी पर विहार करते-करते एक दिन पुनः प्रभू महावीर स्वामी कौशांबी नगरी में पधारे। इसी समय एक महान् आश्चर्य हुआ तीसरी पोरसी में सूर्य और चन्द्र मूल विमान से वहाँ पर आये और थोड़े ही समय में रात्रि हो गयी लेकिन किसी को मालूम न हुआ कि सूर्यास्त हो गया है परन्तु समयज्ञ चन्दनबाला को विदित हो गया कि रात्रि व्यतीत हो गई है जानकर अपने स्थान में चली गई प्रतिक्रमण कर सोने की तैयारी करने लगी। सूर्य-चन्द्र भी अपने-अपने स्थान में जाने लगे। तभी मृगावती को लगा हा हा रात्रि हो गई थी और मैं उपाश्रय में नहीं गयी और ईर्यापथिकी प्रतिक्रमण कर अपनी गुरुणीजी को कहने लगी—मैंने भूल कर दी है रात्रि के समय बाहर रही हूं।

चन्दन बाला ने कहा—उत्तम कुल वाली मृगावती तेरे जैसी को रात्रि के समय उपाश्रय के बाहर रहना उचित नहीं था ऐसा उपालंभ दिया।

मृगावती ने अपनी भूल को स्वीकार कर अपने दोषों का पाश्चाताप करती-करती वहाँ बैठी थी और भूल का पश्चाताप करती-करती इतनी भावना में मस्त बनी कि केवलज्ञान को प्राप्त हो गई। चन्दनबाला तो सो गई थी अकस्मात् एक काला साँप आया और मृगावती ने जान लिया कि साँप यहाँ से जा रहा है वहाँ चन्दन बाला का हाथ है अतः हाथ उठा लूँ ऐसा सोचकर हाथ उठा लिया। हाथ उठाने पर चन्दनबाला जाग गयी और कहने लगी तूने मेरा हाथ क्यों उठाया? मृगावती ने कहा साँप आ रहा है। चन्दन बाला ने पूछा ऐसे अंधेरे में तुझे कैसे मालूम हुआ।

मृगावती ने कहा—ज्ञान से।

चन्दनबाला ने कहा—कौन से ज्ञान से। प्रतिपाति या अप्रतिपाति।

मृगावती ने कहा—आपकी कृपा से मुझे अप्रतिपाति ज्ञान प्राप्त हुआ है।

चन्दनबाला ने सोचा—अहाहा! मैंने ज्ञानी की नहीं केवलज्ञानो की आशातना की इसी प्रकार सोचकर मृगावती के चरणों में गिरकर क्षमायाचना करने लगी तभी चन्दनबाला को भी केवलज्ञान प्राप्त हुआ।

चेल्लना

मनोहर शीयल व्रत का पालन शुद्ध भावसहित करनेवाला मनुष्य चेल्लना की तरह कल्याण रूपी लक्ष्मी को प्राप्त करता है ।

विशाला नगरी में चेटक राजा राज्य करता था । जिसने अपने पराक्रम से अनेक शत्रुओं को अपना दास बनाया था और न्यायवृत्ति से अपने राज्य का पालन करता था । भिन्न २ स्वप्नों से सूचित उसके परिवार में सात पुत्रियों ने जन्म लिया । वही सात पुत्रियां—

प्रभावती का उदयन राजा के साथ,
पद्मावतीका चंपापुरीके दधिवाहन राजाके साथ
मृगावतीका कोशांबीके शतानिक राजाके साथ
शिवाका उज्जैयिनी के चंडप्रद्योत राजाके साथ,

और ज्येष्ठा का प्रभू महावीर के ज्येष्ठ भ्राता नंदिवर्धन के साथ लग्न किया था । दो बाकी थी चेल्लना और सुज्येष्ठा, जो राजमहल में देवकुमारी की तरह राजप्रासाद में सुख से मग्न रहती थी । धर्म कर्म में कुशल, सौन्दर्य

में रति और प्रीति जैसी, सर्व कला में निपुण ऐसी दोनों परस्पर में स्नेह वाली होने से मानो प्रत्यक्ष सरस्वती की दो मूर्तियां ही क्रीड़ा करती हों।

सुज्येष्ठा और चेल्लना से शोभित अन्तःपुर में एक स्थविर तापसी आयी और कहने लगी—शिवधर्म यही धर्म है इसी प्रमाण कहने लगी। तभी सुज्येष्ठा ने अनेक दृष्टान्त दलीलों से असत्य स्थापित किया। कुए में स्नान करना अधम है, बावड़ी में मध्यम है, तालाब में निषेध है और उत्तम स्थान तो गृह में शुद्ध जल से करना वह है। इसीप्रकार जैन धर्म की स्थापना करने लगी। तभी तापसी जैसा-तैसा बोलने लगी। तभी सुज्येष्ठा ने अपनी दासी से गला पकड़वाकर उसे नगर के बाहर निकलवादी।

इसी घटना से तापसी क्रोधित बनी, क्योंकि सत्कार की जगह पराभव पायी। वह भ्रष्ट सिंहनी की तरह चिंतन करने लगी। इस गर्विष्ठा सुज्येष्ठा का मैं एक पट्ट पर चित्र अंकित कर बहु सौतों से भरपूर अन्तःपुर के राजा को बताऊं जिससे उसका लग्न वहाँ होवे और बहुत दुःखी होवे। इसीप्रकार सोचकर स्थविरा रूप पट्ट बनाकर राजा श्रेणिक के पास गई और

उसे वह चित्र दिखाया। श्रेणिक यह देखकर बोला—अहाहा क्या रूप ? क्या देवांगना है ? पाताल कन्या है ? मन में आनंदित होता स्थविरा से पूछने लगा—यह क्या किसीकी प्रतिकृति है ?

विद्यमान है या अविद्यमान ?

परणिता है या अपरणिता ? श्रेणिक के प्रश्नों के उत्तर देती हुई कहने लगी—यह विशाला नगरी के चेटक राजा की पुत्री है। सुज्येष्ठा इसका नाम है, इसका रूप तो मैंने आलेखित किया है। इस पुत्री के योग्य तो आप हो। स्थविरा का अच्छा सत्कार कर उसे रवाना कर दी, लेकिन मन में बसी सुज्येष्ठा को प्राप्त करने हेतु शून्य चित्त वाला रहने लगा। एक बार सुज्येष्ठा के साथ स्वयं का लग्न का इरादा है ऐसा समाचार राजा चेटक को भिजवाया लेकिन राजा चेटक ने स्वीकार नहीं किया। इस समाचार से राजा अति खिन्न हुआ। चिंतातुर चेहरा देखकर अभयकुमार मंत्रीश्वर ने कहा—आपको खिन्न होने की कोई आवश्यक्ता नहीं। मैं आपका इच्छित करूंगा।

पिता का मनोरथ पूर्ण करने के लिए विनय बुद्धि के धारक अभयकुमार के घर पर पिताजी का

बहुत सुन्दर चित्र आलेखित किया और गुटिका से स्वयं का रूप और वर्ण को बदलकर वणिक का वेश धारण कर विशाला नगरी में गया और अन्त:पुर के सामने इत्र की दुकान लगा कर रहने लगा और अन्त:पुर की स्त्रियों को अधिक–अधिक वस्तुएं देने लगा।

एक दिन पट्ट में आलेखित श्रेणिक राजा के रूप को नमन करते हुए अभयकुमार को सुज्येष्ठा की दासी ने देखा और पूछा—यह किसकी प्रतिकृति है? उसने कहा—यह श्रेणिक राजा का रूप है। दासी ने जाकर अपनी स्वामिनी को कहा—सुज्येष्ठा ने परंपरा से श्रेणिक की बात सुनकर उनके साथ लग्न करने की इच्छा हुई और अपनी दासी द्वारा यह अभयकुमार को ज्ञात कराया। साथ में यह समाचार भी कहलाया कि मेरा लग्न श्रेणिक राजा के साथ करवा दीजिए। अभय-कुमार ने कहा—यह कार्य गुप्तता से बन सकता है, कारण कि तेरे पिता इन्कार कर रहे हैं। सुज्येष्ठा ने कहा—गुप्त रीति से श्रेणिक को यहां लेकर आइये।

अभयकुमार ने कहा—श्रेणिक को मैं सुरंग-मार्ग से यहाँ लेकर आ जाऊंगा। तू सुरंग में जाकर उनके साथ लग्न कर देना।

अभयकुमार ने श्रेणिक राजा को संदेश भेज दिया। निश्चित दिन पर आप यहाँ आ जाना और सुज्येष्ठा के साथ लग्न हो जायेगा। यह संदेश प्राप्त कर प्रमोदित हुआ श्रेणिक सुलसा के बत्तीस पुत्रों को अंग रक्षक बनाकर साथ में लेकर आया।

सुज्येष्ठाको चल चित्त वाली जानकर चेल्लना नें पूछा—तूं कहाँ जा रही है?

सुज्येष्ठा ने उत्तर दिया—मैं कहीं नहीं जा रही हूं। कभी तूने मेरे से कोई बात छिपी नहीं रखी है और आज क्यों छिपा रही है। चेल्लना ने कहा।

मैं श्रेणिक के साथ लग्न करने जा रही हूं, सुज्येष्ठा ने कहा।

चेल्लना का दिल भर आया और कहने लगी रे बहन! तेरे बिना मैं एक क्षण भी नहीं रह सकती। मुझे छोड़कर क्यों जाती है।

सुज्येष्ठा, चेल्लना को साथ में लेकर गुप्त रीति से सुरंग के पास आ गयी। श्रेणिक दोनों को रथ में बिठा कर चलने लगा। इतने में सुज्येष्ठा को अपने रत्नाभरण की मंजूषा याद आयी और वह लेने चली गई।

श्रेणिक ने सुज्येष्ठा की भाँति चेल्लना को को उठाकर रथ में बैठाया ।

बैरी के स्थल में ज्यादा रहना अच्छा नहीं— सुभटों ने कहा । श्रेणिक रथ को चलाने लगा । तभी सुज्येष्ठा अपनी रत्नाभरण की मंजूषा लेकर आयी और देखा तो रथ चला गया । बिलखती, आकुल-व्याकुल बनी गाढ़ स्वर मे चेल्लना चेल्लना बोलती विलाप करने लगी । सुज्येष्ठा का रुदन सुनकर चेटक राजा वहां आया और बात सुनकर सन्नद्ध होकर वैरी के पीछे भागने लगा तभी वैरंगिक नामक सुभट ने कहा—आपको कष्ट झेलने की कोई आवश्यकता नहीं है । मैं अभी जाकर चेल्लना को लेकर आ जाऊंगा ।

वैरंगिक अनुज्ञा पाकर रथ में बैठकर पीछा करने गया । सुलसा के बत्तीस पुत्रों का हनन किया जिससे मार्ग में गिरे पुत्रों की लाश से मार्ग अवरुद्ध हो गया । इतने में श्रेणिक तो चेल्लना को लेकर राजगृही में आ गया ।

वैरंगिक वापस आया । चेल्लना के वियोग में दुनियाँ से तथा विषय से विरक्त बनी सुज्येष्ठा ने पिता की आज्ञा लेकर साध्वी चन्दनबाला के पास चारित्र अंगीकार किया ।

अब श्रेणिक सुज्येष्ठा की भाँति चेल्लना को सुज्येष्ठा-सुज्येष्ठा इसीप्रकार बुलाने लगा तभी चेल्लना ने कहा—हे स्वामिन् ! मैं सुज्येष्ठा नहीं लेकिन सुज्येष्ठा की छोटी बहन चेल्लना हूं। चेल्लना सुज्येष्ठा के वियोग से दुःखित हुयी लेकिन श्रेणिक राजा हर्षित और खेदित बना क्योंकि चेल्लना जैसी पत्नि के लाभ से हर्षित और सुलसा के बत्तीस पुत्रों के मरण से दुःखित बना। राजा ने राजगृही में चेल्लना के साथ पाणिग्रहण किया। अभयकुमार ने सुलसा के पास जाकर बत्तीस पुत्रों के मरण का समाचार कहा तथा शोक भी दूर कराया।

एक दिन अभयकुमार को श्रेणिक ने अपनी प्राणप्यारी पत्नि के लिए एक स्तंभ महल बनाने का आदेश दिया। अभयकुमार ने देव आराधना कर एक स्तंभ वाले महल का निर्माण कराया और सर्व ऋतु के फल देने वाला एक उद्यान भी बनाया। चेल्लना वहाँ रहकर एकाग्र चित्त से धर्माराधन करने लगी। शीयल धर्म का पालन अति शुद्धता से किया जिसके फलस्वरूप वर्धमान स्वामी ने सुलसा के साथ चेल्लना की प्रशंसा की।

एक दिन मध्य रात्रि में ठण्डी बहुत पड़ रही थी। निद्रा में बोली इनका क्या होता होगा ? यह सुन-

कर श्रेणिक ने सोचा; चेल्लना पर पुरुष में आसक्त होने लगी है। इसी शंका से क्रुद्ध होकर प्रभात में उठ कर समवसरण में जाकर श्री वीरभगवान को पूछा—

मेरी प्रिया चेल्लना सती है या असती ?

प्रभू ने कहा—तेरी सर्व स्त्रियां सती हैं।

श्रेणिक तू कल साधु वन्दन हेतु गया था, साथ में चेल्लना भी थी, ठण्डी के दिन थे लेकिन बदन खुला था। रात को खूब ठण्डी पड़ने से चेल्लना को वह मुनिवर याद आये। ऐसी कड़क ठण्डी में उनका क्या होता होगा ? तेरी स्त्री ने भक्तिवश विचार किया था, मन में कोई विकार नहीं था।

तत्पश्चात् चेल्लना रानी श्री वीर प्रभु से प्ररूपित धर्म करती हुई उनके पास दीक्षा ग्रहण की। सर्व कर्म क्षय कर मुक्ति में गयी। ❖

मन के लिये उर्दू में भी कहा है—

"मस्जिद तो बनाली क्षण भर में, ईमां की हरारत वालों ने।
मन अपना पुराना पापी है, बरसों में नमाजो हो न सका।।

अवश्य मंगवाइये ! घर की शोभा बढाईये !!

सन्तानों में संस्कार और सदाचार की सौरभ प्रसारित करें।

आशीर्वाददाता-प० पू० कर्नाटककेसरी आचार्यदेव श्री भद्रंकर-सूरीश्वरजी म० तथा पू० उपाध्याय पुण्यविजयजी गणिवर

卐 महासतियों के चरित्र की प्राथमिक श्रेणी प्रकाशित 卐

भाग सं०		मूल्य
1-	महासती सुलसा	1.00
2-	महासती चन्दनबाला तथा मनोरमा	1.00
3-	महासती नर्मदासुन्दरी तथा सीता	1.50
4-	महासती सुभद्रा तथा राजमती	1 50
5-	महासती ऋषीदत्ता	2.00
6-	महासती अंजना आदि पांच महासती	2.00
7-	ब्राह्मी आदि आठ महासती	2.00
8-	धारिणी आदि 17 महासती	2.00

नोट (i) पूर्ण श्रेणी ...

(ii) मनीअ... प्राप्त होंगी।

... जी जैन
... भायलापुरा
हिण्डान सिटी-322230
सवाईमाधोपुर (राजस्थान)